पश्चिमी ज़हर से भरी शिक्षा व्यवस्था में हिंदू ग्रंथों को कर्मकांड बताकर गायब कर दिया

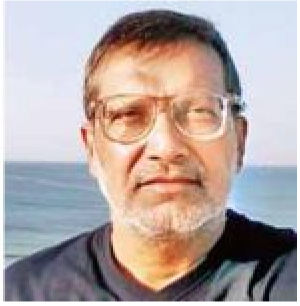

हिन्दू आज भी जजिया भर रहे हैं – 3: एक केंद्रीय विश्वविद्यालय में एक पाठ्यक्रम बनाने की मीटिंग हो रही थी। उस में एक अध्याय का शीर्षक रखा गया: भारत में मानवतावादी परंपरा। एक प्रोफेसर ने प्रस्तावित किया कि इस में लिखा जाए, 'बौद्ध, जैन, इस्लाम तथा सूफी विचार'। दूसरे ने चिंता की, "तब तो हिन्दू भी देना पड़ेगा"। वह हिन्दू जोड़ना नहीं चाहते थे, पर उन्हें लगा कि जब धर्मों का नाम लिखा जा रहा है तब स्वभावत: 'हिन्दू' भी जोड़ना जरूरी होगा। इस का उत्तर देते हुए प्रस्तावक प्रोफेसर ने आराम से उत्तर दिया, "हिन्दू धर्म या विचार जैसी कोई चीज नहीं थी।" दूसरे ने फिर शंका की, "मगर बौद्ध धर्म से पहले भारत में रहे चिंतन का तो उल्लेख करना होगा?" तब, पहले प्रोफेसर ने बेफिक्र उत्तर दिया, "अच्छा तो लिख दो, अरली इंडिया"।

ये भी पढ़िये – मंदिरों पर सरकारी शिकंजा क्यों?

दूसरा उदाहरण लीजिए। देश भर में बरसों से पढ़ाई जा रही एक पाठ्य-पुस्तक में वेदों के प्रति दुर्भावना भरी हुई है। कहीं उपेक्षा से लिखा है, 'ऋगवेद एक कर्मकांडीय पुस्तक है'। कहीं यह कि 'वेदों के प्रभुत्व को चुनौती दी गई'। जैसे, वेद कोई महान पुस्तक नहीं, कोई दुष्ट गिरोह थे! जहाँ-तहाँ ऐसे वाक्य, या शब्द छात्रों में हिन्दू ज्ञान के प्रति उपहासात्मक या नकारात्मक भाव भरते हैं। पाठ में छिपा लिया गया कि ऋगवेद विश्व की सब से प्राचीन और महान पुस्तक के रूप में विश्व में सामदृत है।

उसी पुस्तक में एक शीर्षक है, 'महाभारत का आलोचनात्मक अध्ययन'। चुन-चुन कर ऐसी बातें विचित्र भाव से दी गई हैं जिस से महाभारत का कुछ ज्ञान नहीं होता। केवल एक तिरस्कार भाव बनता है। उक्त पुस्तक को दर्जन भर से अधिक प्रोफेसरों ने मिल कर लिखा है, जिन में अधिकांश दिल्ली के केंद्रीय विश्वविद्यालयों के हैं। केवल इसी तरह की चीजों को बार-बार अबोध पाठकों में भरने का काम किया गया है। हिन्दू ज्ञान-परंपरा या धर्म की कहीं, कोई जानकारी उस में नहीं है।

यह दुराग्रह तब साफ दिखता है, जब वही पुस्तक अरब और इस्लाम का इतिहास बताती हैं। तब उस की शैली पलटकर जी-हुजूरी वाली हो जाती है। उन्हीं प्रोफेसरों ने विश्व इतिहास की पाठ्य-पुस्तक भी लिखी है। उस में पूरे दो बड़े अध्याय इस्लाम और उस के विस्तार पर गए हैं। श्रद्धा, प्रशंसा से ओत-प्रोत कुल मिलाकर चौवालीस पृष्ठ समर्पित हैं। आरंभ में ही लिखा है कि "हमारी समझ प्रोफेट की जीवनी,

कुरान और हदीस पर आधारित है।" यानी जैसे इस्लामी मतवाद अपने को पेश करता है, उन प्रोफेसरों ने उसे अदब और अतिरिक्त अनुशंसा भाव से बच्चों तक पहुँचा दिया। कहीं उस 'आलोचनात्मक अध्ययन' का संकेत तक नहीं, जो महाभारत के लिए लिख कर घोषित किया था। 'वेदों के प्रभुत्व' की तरह कहीं कुरान के प्रभुत्व पर आक्रोश प्रेरित करने का जतन भी नहीं (जबकि यह किताब व मतवाद अपने को एकमात्र सत्य कहते हुए घोषित रूप से दुनिया पर राजनीतिक अधिपात्य समेत प्रभुत्व का रिलीजन 'दीने घालिब' कहता है।) उलटे अनगिनत तस्वीरों, रेखाचित्रों, मानचित्रों के माध्यम से इस्लाम की महानता और शान का इतना लंबा बखान है कि मानो विश्व इतिहास की स्कूली पुस्तक नहीं, बल्कि किसी काफिर को धर्मांतरित कराने के लिए लिखा गया तबलीगी साहित्य हो!

पुस्तक की यह श्रद्धा-भंगिमा बाबर के बारे में इस उक्ति से भी झलकती है कि उस ने "भारत में मुगल साम्राज्य की नींव रखी।" मानो किसी बगीचे या पुस्तकालय की नींव रखने जैसा उपयोगी या हानिरहित कार्य हो। उस के लिए हुए आक्रमण, जिहाद, सामूहिक संहार, मंदिरों का विध्वंस, जबरन धर्मांतरण, आदि मोटी बातो का भी उल्लेख नहीं। उलटे कहीं पाठक को संदेह न हो, इसलिए अलग से लिखा है कि "उन अभियानों में मारे गए लोगों की संख्या को बढ़ा-चढ़ाकर" बताया जाता है। स्वयं पुस्तक में कोई संख्या तो क्या, किसी मरने का संकेत तक नहीं किया। मानो मुगल साम्राज्य विस्तार कोई दांडी-यात्रा रही हो। पर किन्हीं अन्य स्त्रोत से पाठक को कोई सत्य न मिल जाए, इस की दवा कर दी गई!

निस्संदेह, यह कोई शैक्षिक लेखन नहीं जो दो प्रकार के ग्रंथों, विश्वासों, राज्य व्यवस्थाओं के बारे में दो विपरीत मानदंड अपनाए। हिन्दू इतिहास के प्रति यह आदतन निंदा, खिल्ली उड़ाना और शत्रुता भाव ही भारत की औपचारिक शिक्षा में है। हिन्दू-विरोधी राजनीतिक प्रचार को इतिहास कह कर पढ़ाया जाता है। यह हिन्दू नई पीढ़ियों के साथ भयंकर छल व विश्वासघात है। देश की जड़ में मट्ठा डालना है। लेकिन सभी राजनीतिक दल इसी को नतमस्तक चलाते रहे हैं। बल्कि हिन्दूवादी कहलाने वाले नेता गर्व से कहते हैं कि हम ने 'एक पन्ना भी नहीं बदला'। सब कुछ वैसे ही पढ़ा ही रहे हैं!

ध्यान दें, कि भारत में ऐसा हिन्दू-विरोधी जुल्म अंग्रेज औपनिवेशिक शासकों ने भी नहीं किया था। आप तुलना करके देख सकते हैं। तब पाठ्य-पुस्तकें हिन्दू ज्ञान और परंपरा को भी सहजता से रखती थी। यह स्वतंत्र भारत में हुआ कि वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, जैसे कालजयी ग्रंथों शिक्षा से बाहर कर दिये गए। इन्हें न ज्ञान-भंडार का सम्मान है, न धर्म-पुस्तक का। यदि इन्हें कुरान, बाइबिल की तरह धर्म-पुस्तक मानते, तो इन के प्रति वामपंथी कुत्सा नहीं फैलाई जाती। राम, कृष्ण और उन से संबंधित स्थान, प्रसंग, आदि को दैवी अवतार का अखंड आदर रहता। मगर वह आदर यहाँ केवल प्रोफेट मुहम्मद और उन की पुस्तक के लिए सुरक्षित है।

दूसरी ओर, हिन्दू ग्रंथों को ज्ञान-पुस्तक की मान्यता भी छीन ली गई। स्कूल से लेकर विश्वविद्यालय तक, इन्हें कहीं पढ़ा-पढ़ाया नहीं जाता। दर्शन, साहित्य, मनोविज्ञान, इतिहास, राजनीति, आदि सभी विषयों में सारी अध्ययन-सूची पश्चिमी पुस्तकों से भरी है। उपनिषद दर्शन के विश्व-कोष हैं, किंतु भारत में दर्शनशास्त्र का विद्यार्थी अरस्तू, कांट, मार्क्स, फूको, देरिडा, आदि पढ़ता है। उसी तरह, महाभारत राजनीति और नैतिकता की अदभुत पुस्तक होते हुए भी अछूत की तरह शिक्षा से बहिष्कृत है!

अर्थात्, जब वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, नीतिशतक, आदि को धर्म-पुस्तक का आदर देने का प्रसंग हो, तब इन्हें गल्प कहकर मनमानी आलोचना की जाती है। किंतु जब इन्हें ज्ञान-पुस्तक का महत्व देते शिक्षा में जोड़ना लाजिम हो, तब इन्हें धार्मिक कहकर शिक्षा से बाहर रखा जाता है। इस प्रकार, विश्व की सब से अनूठी ज्ञान-संपदा अपने ही देश में उपेक्षित है। अपनी मूल्यवान थाती का ऐसा निरादर पूरी दुनिया में कहीं नहीं हुआ।

भारत में हिन्दू समाज के साथ हो रहे इस दोहरे अन्याय को क्रिश्चियनिटी के उदाहरण से समझ सकते हैं। पश्चिमी समाज बाइबिल और जीसस प्रसंगों की आलोचनात्मक व्याख्या करता है। किंतु साथ ही क्रिश्चियनिटी का पूरा चिंतन, चर्च के विचार, भाषण, प्रस्ताव, आदि यूरोप की शिक्षा प्रणाली का अंग हैं। पश्चिमी विश्वविद्यालयों में क्रिश्चियन स्टडीज के विभाग, विशिष्ट विद्वत पत्रिकाएं वैसे ही सहज हैं जैसे इतिहास, राजनीति, भौतिकी, आदि की। क्रिश्चियनिटी संबंधी विमर्श, शोध, आदि के अकादमिक जर्नल ऑक्सफोर्ड, सेज जैसे प्रमुख अकादमिक प्रकाशनों से प्रकाशित होते हैं।

जबकि भारतीय विश्वविद्यालयों में धर्म-अध्ययन जैसा कोई विषय, विभाग ही शिक्षा से बहिष्कृत है! चाहे मैक्स वेबर जैसे महान विद्वान ने भगवदगीता को राजनीति और नैतिकता के अंत:संबंध पर पूरे विश्व में एक मात्र सुसंगत पाठ्य-सामग्री कहा। किंतु यहाँ राजनीति शास्त्र के प्रोफेसर भी यह नहीं जानते। वस्तुतः क्रिश्चियनिटी की तुलना में हिन्दू ज्ञान-चिंतन गुण और मात्रा, दोनों में अतुलनीय रूप से गहरा है। सामाजिक अध्ययन (विज्ञान) का कोई विषय नहीं, जिस के अध्ययन में हिन्दू ग्रंथों से भारी सहायता न मिले। फिर भी, इसे समाज विज्ञान में अथवा स्वयं एक विषय के रूप में भारत में कोई अकादमिक स्थान नहीं है।

पूरे संदर्भ में देखें, तभी स्पष्ट होगा कि भारत में हिन्दू समाज और मनीषा के साथ मुगल राज जैसा जुल्म हो रहा है। निश्चय ही, ऐसा करने के लिए स्वतंत्र भारत के नेताओं ने जनता से कभी कोई जनादेश नहीं लिया है। यह सब चुपचाप, एक वामपंथी, हिन्दू-विरोधी, शरीयत राज की मानसिकता से चल रहा है। जिस में हर 'वर्नाकुलर', 'नेटिव' या 'काफिर' चीज नीच मानी जाती है। (जारी)

साभार- https://www.nayaindia.com/ से